आत्मा की छह प्रकृतियाँ

जो जीव, राग–द्वेषरूप परिणमा होने पर भी, मात्र शुद्धात्मा में (द्रव्यात्मा में=स्वभाव में) ही 'मैंपना' (एकत्व) करता है और उसका ही अनुभव करता है, वही जीव सम्यग्दृष्टि है अर्थात् यही सम्यग्दर्शन की विधि है।

लेखक – C.A. जयेश मोहनलाल शेठ
(बोरीवली) B.Com., F.C.A.

नमस्कार मंत्र–अर्थसहित

णमो अरिहंताणं	– त्रिकालवर्ती तीर्थंकर प्रमुख अरिहन्त भगवन्तों को समय–समय की वन्दना होओ!
णमो सिद्धाणं	– त्रिकालवर्ती सिद्ध भगवन्तों को समय–समय की वन्दना होओ!
णमो आयरियाणं	– त्रिकालवर्ती गणधर प्रमुख आचार्य भगवन्तों को समय–समय की वन्दना होओ!
णमो उवज्झायाणं	– त्रिकालवर्ती उपाध्याय भगवन्तों को समय–समय की वन्दना होओ!
णमो लोए सव्व साहूणं	– त्रिकालीवर्ती साधु भगवन्तों को समय–समय की वन्दना होओ!
एसो पंच नम्मोकरो	– यह पंच नमस्कार मन्त्र,
सव्व पाप पणासणो	– सब पापों का नाश करनेवाला है
मंगलाणं च सव्वेसिं	– सर्व मङ्गलों में
पढमं हवई मंगलं	– उत्कृष्ट मङ्गल है।

पंच परमेष्ठी वंदन श्लोक

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः
श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु नो मङ्गलम्

ॐ

श्रीमहावीराय नमः

आत्मा की छह प्रकृतियाँ

- संकलन -

CA जयेश मोहनलाल शेठ

(बोरीवली), B.Com., F.C.A.

- अर्पण -

माता - पू. कान्ताबेन तथा

पिता - पू. स्व. मोहनलाल नानचन्द शेठ को

जो जीव राग–द्वेष के परिणमित होने पर भी मात्र शुद्धात्मा में (द्रव्यात्मा में = स्वभाव में) ही 'मैंपन' (एकत्व) करता है और उसी का अनुभव करता है, वही जीव सम्यग्दृष्टि है। यही सम्यग्दर्शन की विधि है।

प्रकाशक : शैलेश पूनमचन्द शाह

अनुमोदक – जयकला नलिन गान्धी परिवार

– अनुक्रमणिका –

क्रम	*विषय*	*पृष्ठ*
१.	अधमाधम प्रकृति	३
२.	अधम प्रकृति	७
३.	विमध्यम प्रकृति	१३
४.	मध्यम प्रकृति	१९
५.	उत्तम प्रकृति	२५
६.	उत्तमोत्तम प्रकृति	३५

सम्यग्दर्शन के बारे में अधिक गहन अभ्यास के लिये द्रव्यानुयोग और वस्तु व्यवस्था सहित लेखक की अन्य कृति नि:शुल्क मँगाइये - 'सम्यग्दर्शन की रीत' और 'सुखी होने की चाबी'

यह पुस्तक और अन्य साहित्य की *pdfs* और *e-books* आप **website www.jayeshsheth.com** से डाउनलोड कर सकते हैं।

© CA **जयेश मोहनलाल शेठ**

मूल्य : अमूल्य

– सम्पर्क और प्राप्तिस्थान –

शैलेश पूनमचन्द शाह – ४०२, पारिजात, स्वामी समर्थ मार्ग,
(हनुमान क्रॉस रोड नं २), विले पार्ले (पूर्व), मुम्बई ४०००५७
फ़ोन नं २६१३ ३०४८ मोबाईल नं 98924 36799/93243 37326
Email: spshah1959@gmail.com
मनीष मोदी, हिन्दी ग्रन्थ कार्यालय - ९, हीराबाग़,
सी. पी. टैंक, चर्नी रोड (पूर्व), मुम्बई ४००००४
मोबाईल नं. 98208 96128
Email: manishymodi@gmail.com

टाईपसेटिंग : समीर पारेख - *क्रियेटिव पेज सेटर्स,* फोन : 83692 68695
मुद्रण : नीलेश पारेख – पारस प्रिन्ट्स, गोरेगाँव, मुम्बई फोन : 99691 76432

ॐ

॥ श्री महावीराय नमः ॥

आत्मा की छह प्रकृतियाँ

पूज्य आचार्य उमास्वातिजी महाराज ने तत्वार्थसूत्र की सम्बन्धकारिका में आत्मा की छह प्रकृतियाँ बतायी हैं ।

१. अधमाधम २. अधम ३. विमध्यम ४. मध्यम ५. उत्तम ६. उत्तमोत्तम

संसारी आत्मा की ये छह प्रकृतियाँ जान लेने पर जीव अपना आध्यात्मिक स्तर (level) जान सकता है । मोक्षमार्ग में आगे बढ़ने के लिये अपना स्तर जानकर यदि वह नीचा हो तो सत्य दिशा में अपना पुरुषार्थ बढ़ा सकता है । परिवर्तन स्वयं में करना है न कि दूसरों में । प्राय: जीव अपनी होशियारी, बुद्धिमानी, चालाकी का दूसरे जीवों को अपने अनुकूल परिवर्तित करने में ही लगा देता है । लेकिन वास्तव में अपनी सम्पूर्ण होशियारी, बुद्धिमानी, चालाकी का उपयोग अपने आत्महित के लिये ही करना चाहिये ।

आत्मा की छह प्रकृतियों का वर्णन पढ़कर तथा उसपर सोचकर हम स्वयं को कितना बदल सकते हैं या अपने में कितना परिवर्तन आवश्यक है, इस बात का अन्दाज़ा लगा लेना चाहिये । अगर जीव स्वयं को बदलना नहीं चाहता तो उसे मोक्षमार्ग मिलना कठिन ही है ।

यह विवरण उसी जीव के लिये कार्यकारी होगा जो ख़ुद को बदलना चाहता है। ऐसे जीवों को ही आत्मा की छह प्रकृतियों का वर्णन पढ़कर तथा उसपर सोचकर सच्चा लाभ मिलेगा। सच्चा लाभ अर्थात् आत्मा की उन्नति।

आत्मा की छह प्रकृतियों की तरह आत्मा की लेश्याएँ भी छह प्रकार की होती हैं। लेश्याओं में दो भेद हैं - द्रव्यलेश्या और भावलेश्या। प्रस्तुत लेख में उनका वर्णन अपेक्षित नहीं है, इसलिये यहाँ हम लेश्याओं का वर्णन नहीं करेंगे।

आत्मा की छह प्रकृतियों में अधमाधम प्रकृति की अपेक्षा अधम प्रकृति अच्छी है, अधम प्रकृति से विमध्यम प्रकृति अच्छी है और विमध्यम प्रकृति से मध्यम प्रकृति अच्छी है। फिर भी प्रथम चारों प्रकृतियाँ मिथ्यात्व से दूषित हैं, अर्थात् वे जीव को सम्यग्दर्शन से दूर ही रखती हैं। इन चारों में मिथ्यात्व का तारतम्य हो सकता है। लेकिन पाँचवीं उत्तम प्रकृति की प्राप्ति के बग़ैर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति असम्भव ही है। और बिना सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के मोक्षमार्ग भी असम्भव ही है।

आत्मा की छह प्रकृतियों का यह वर्णन मनुष्य को केन्द्र में रखकर किया गया है। इसलिये आत्मा की छह प्रकृतियों के वर्णन में सर्वत्र मनुष्य का ही उल्लेख मिलेगा। यह विवरण हमने स्वात्मानुभव और शास्त्राभ्यास के आधार पर किया है। फिर भी विवरण में हमारी किंचित भी ग़लती हो तो भगवान को साक्षी मानकर हमारा मिच्छामि दुक्कडं! उत्तम क्षमा!

१. अधमाधम प्रकृति : अधमाधम प्रकृति वाला मनुष्य परलोक को नहीं मानता और अपने आप को आत्मा भी नहीं मानता। ऐसे जीव इस लोक के माने हुए पौद्गलिक सुख की प्राप्ति हेतु किसी भी प्रकार की लोकलज्जा नहीं रखते, वे पौद्गलिक सुख के लिये कोई भी पापकार्य करने में ज़रा-सा भी नहीं हिचकते। वे लोक, परलोक और आत्मा के अस्तित्व को मानते ही नहीं और इस वजह से परलोक में पाप का फल क्या होगा और परलोक में अपनी दशा क्या होगी, ऐसा कोई भी विचार नहीं करते।

ऐसे जीव प्राय: पापानुबन्धी पाप या पापानुबन्धी पुण्य के उदयवाले होते हैं। इसलिये वे ग़रीब हों या अमीर, किसी भी प्रकार का पाप करने से नहीं डरते। प्राय: ऐसे जीव सप्त महाव्यसन (चोरी, जुआँ, मद्यपान, मांसभक्षण, शिकार, वेश्यागमन, परस्त्रीगमन (परपुरुषगमन) से ग्रसित रहते हैं, फिर भी उन्हें इस बात का कोई भी रंज नहीं होता। उल्टा वे इन सप्त महाव्यसनों को ही जीवन का सच्चा आनन्द/मौज समझते हैं। इसलिये सप्त महाव्यसनों को परमसेवनीय मानते हैं और उनका रसपूर्वक सेवन भी करते हैं। ऐसे जीवों को खाने-पीने का भी विवेक नहीं होता, इससे उन्हें अभक्ष्य भोजन करने का ज़रा-सा भी रंज नहीं होता और वे शराब, गांजा, ड्रग्स, तम्बाकू, इत्यादि का भी बेख़ौफ़ उपयोग करते हैं। ऐसे जीव अत्यन्त भोगलोलुप तथा विषयासक्त होते हैं, इसलिये भोगों का त्याग उन्हें बहुत ही कठिन लगता है।

अधमाधम प्रकृति का मनुष्य अपने पूरे जीवन में महाभयंकर पापाचरण से अपने अनन्त भविष्यकाल के लिये दु:खमय गतियों का निर्माण कर लेता

है, अनन्त पापों का बन्ध कर लेता है। ऐसे जीव इस जन्म में सच्चा सुख नहीं पाते और भविष्य में भी उनकी अनन्तकाल के लिये सच्चा सुख पाने की सम्भावना क्षीण ही है। ऐसे जीवों के राग-द्वेष (पसन्द-नापसन्द) अतितीव्र होते हैं, इसलिये उनके मन में अप्रिय लोगों के लिये धिक्कारभाव भी प्रचुर मात्रा में भरा रहता है। इससे पापकर्मों का बन्ध भी अतितीव्र होता है।

ऐसे जीवों को जगत के कोई भी धिक्कारयोग्य कार्यों को करने में ज़रा-सी भी हिचक नहीं होती। उनको इहलोक का डर नहीं होता और परलोक को न मानने की वजह से परलोक का डर भी नहीं होता। इसलिये परलोक में इस पाप का क्या फल होगा इसका भी विचार नहीं होता। लोग मेरे बारे में क्या कहेंगे? मेरे बारे में क्या सोचेंगे? इत्यादि विकल्प नहीं होते।

ऐसे जीव वर्तमान जन्म में सिद्धि प्राप्त करने के लिये अनेक प्रकार के घोर पापानुष्ठान करने से नहीं हिचकते। वे सिद्धि तथा सम्पत्ति के लिये कुछ भी कर सकते हैं।

इस लोक में मौज कर लो फिर परलोक किसने देखा है? अधमाधम जीवों के ऐसे ही भाव होते हैं। इसलिये वे परलोक में अपने हित के बारे में बेफ़िक्र रहते हैं। इस कारण वे सभी प्रकार की अनीति करते हैं। उनकी वृत्ति मलिन होती है। वे धर्म का भी दुरुपयोग करते हैं, कभी-कभी तो धर्म का मज़ाक़ भी उड़ाते हैं। ये लोग धर्म का ढोंग करके सम्पत्ति जुटाते भी देखे जाते हैं।

ऐसे लोग अतिक्रूर स्वभाव के होते हैं, लोगों से विश्वासघात करने में ज़रा

भी नहीं हिचकते। अपने फ़ायदे के लिये दूसरों को बड़े नुक़सान में डुबोने से ज़रा-सा भी नहीं झिझकते। अपने स्वार्थ में बाधक बनते लोगों को किसी भी तरीक़े से अपने रास्ते से हटाते या हटवाते, ज़रा-सा भी नहीं झिझकते।

ऐसे लोग सत्ता और सम्पत्ति के बल पर सभी कार्य अपनी मर्ज़ी के अनुसार करानेवाले होते हैं। वे सत्ता और सम्पत्ति को ही सर्वस्व मानते हैं और उन्हीं के अहंकार में डूबे रहते हैं। इसलिये वे सत्ता और सम्पत्ति के लिये अपने सगे भाई का भी लिहाज़ नहीं करते, समय आने पर उसे भी छलने में नहीं झिझकते। जिनके पास सत्ता और सम्पत्ति नहीं है ऐसे अधमाधम प्रकृति के लोग भी यही मानसिकता रखते हैं, वे भी ऐसा सोचते हुए ज़रा-सा भी नहीं झिझकते। ऐसे लोग दानादि (दान-शील-तप-भव) में नहीं मानते, लेकिन किसी लौकिक लाभ हेतु या अपने नाम के लिये दानादि भी कर सकते हैं।

ऐसे लोगों को सम्पत्ति के लिये भयंकर हिंसक व्यापार-उद्योग करते समय या फिर ऐसे व्यापार-उद्योग में निवेश करते समय ज़रा-सी भी झिझक नहीं होती। उल्टे वे उससे ज़्यादा से ज़्यादा कैसे कमाया जा सकता है इसी व्यवस्था में लगे रहते हैं। ऐसे व्यापार-उद्योग में होनेवाले पाप का अफ़सोस करने के बजाय उससे हम कितना कमायें इस बात में उन्हें अधिक रुचि होती है। धन के लिये अधम और विमध्यम प्रकृति के लोग भी कभी लोभ-लालच में आकर ऐसे हिंसक व्यापार-उद्योग में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से साझेदार बन जाते हैं। इसलिये वे भी आंशिक रूप से अधमाधम प्रकृति से परिणमते हैं।

ऐसे जीवों का स्वभाव अतिक्रूर और परिणाम अतिमलिन होने से वे प्राय: नरकायु ही बाँधते हैं और नरक से निकलकर क्रूर पशु बनकर बार-बार नरक में जन्म लेते हैं। इस तरह से दु:ख भोगते हुए वे अन्त में अनन्तकाल तक निगोद में रहते हैं और अनन्तानन्त दु:ख भोगते हैं। ऐसे जीव एकेन्द्रिय में असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल तक रह सकते हैं, जहाँ दु:ख ही दु:ख हैं।

ऐसे जीव पाप-पुण्य (कर्म) को नहीं मानते हैं इसलिये इस जगत का कोई भी निन्दनीय काम करते वक़्त नहीं झिझकते। लोग क्या कहेंगे इसकी उन्हें कोई परवाह नहीं होती, लोकलाज नहीं होती। वे धन और सम्पत्ति के लिये किसी भी निम्न स्तर तक गिर सकते हैं। वे किसी के भी साथ छल कर सकते हैं। फिर वे मित्र हों या सगे-सम्बन्धी हों, उन्हें छलते हुए झिझकते नहीं। छल भी इतनी सफ़ाई से करते हैं कि कोई स्वप्न में भी सोच नहीं सकता। शायद छले जाने के बाद भी सामनेवाला समझ नहीं पाये कि मुझे छला गया है।

ऐसे लोग धनवानों को ही सर्वगुणसम्पन्न मानते हैं और उन्हीं का अनुसरण करते हैं। कभी-कभी लालच से प्रेरित होकर बाहर से धर्मनिष्ठ होने का ढोंग भी करते हैं। वे लोगों को छलने के लिये भी धर्म का उपयोग करते हैं। धर्म में भी ऐसे लोग अपने मन के अनुसार कराने को, कोई भी निम्न स्तर तक गिरने से नहीं झिझकते।

हुण्डा अवसर्पिणी पंचम काल (कलियुग) में ऐसे लोगों का बहुत प्रभाव दिखता है। ऐसे लोग ख़ुद को सर्वगुणसम्पन्न मानकर ही पेश आते

हैं और सच्चे धार्मिक जीवों के ऊपर झूठे इल्ज़ाम लगाकर या उन्हें ढोंगी कहकर बदनाम भी करते हैं। ऐसे लोगों को सच्चे धार्मिक जीवों का उपदेश न तो पचता है और न ही रुचता है। दिखावे के लिये वे कोई अनुकूल सम्प्रदाय (सुविधाजनक धर्म) का धर्म भी पाल सकते हैं।

कई जीवों में अधमाधम प्रकृति आंशिक रूप से भी होती है। वे आंशिक रूप से अधम और आंशिक रूप से अधमाधम प्रकृति के भी हो सकते हैं। जैसे किसी क्षेत्र में, काम में, वर्तन में, वाणी में, विचार में या व्यवहार में वे अधमाधम या अधम प्रकृति के भी हो सकते हैं। ऐसे जीव किसी को दिखाने के लिये या छलने के लिये ऊपर से विमध्यम प्रकृति जैसा व्यवहार भी कर सकते हैं।

नोट : हमें इन सब अधमाधम प्रकृति के जीवों के बारे में पढ़कर दूसरे जीवों को जाँच-परखकर उनको प्रमाणपत्र नहीं देना है और न ही उनके प्रति अपने हृदय में धिक्कार उत्पन्न होने देना है। ऐसे जीव एकमात्र करुणा के ही पात्र हैं। ऐसे लक्षण अगर स्वयं में हों तो त्वरा से मोक्ष के लक्ष्य से उन्हें दूर करने के लिये और सत्य-धर्म की प्राप्ति के लिये पुरुषार्थ प्रारम्भ करना चाहिये।

२. अधम प्रकृति :- अधम प्रकृति वाला मनुष्य न परलोक को मानता है और न ही स्वयं को आत्मा मानता है। ऐसा जीव दूसरों को छलने के लिये या अपनी धर्मपरायणता का दिखावा करने के लिये 'मैं आत्मा हूँ' ऐसा कह भी सकता है, मगर वस्तुतः वह ऐसा मानता नहीं है।

ऐसे जीव लोक में बदनामी के डर से अधमाधम जीवों जैसे काण्ड

खुल्लमखुल्ला नहीं करते । परन्तु ऐसे जीव इस लोक के माने हुए पौद्गलिक सुख को पाने के लिये ही सारा पुरुषार्थ करते हैं । ऐसे लोग पौद्गलिक सुख प्राप्ति के लिये कोई भी पापकर्म करने से ज़रा-सा भी नहीं हिचकते । बस इतना ध्यान रखते हैं कि वे लोगों की नज़रों से बचे रहें । ये लोग लोक, परलोक और आत्मा को मानते ही नहीं इसलिये परलोक में पाप का फल क्या होगा और अपनी दशा क्या होगी, इस प्रकार के कोई भी विचार उनको नहीं आते ।

ऐसे जीव प्राय: पापानुबन्धी पाप या पापानुबन्धी पुण्य के उदयवाले होते हैं । इसलिये अमीर हों या ग़रीब हों, वे किसी भी प्रकार के पाप से नहीं डरते। प्राय: ऐसे जीव सप्त महाव्यसनों (चोरी, जुआँ, मदिरापान, मांसभक्षण, शिकार, वेश्यागमन तथा परस्त्रीगमन/परपुरुषगमन) का लोगों की नज़रों से बचकर सेवन करते हैं । और उन्हें इस बात का कोई रंज भी नहीं होता । बल्कि वे इन सप्त महाव्यसनों के सेवन को ही जीवन का सच्चा मज़ा/आनन्द समझते हैं । इसलिये वे उन सप्त महाव्यसनों को परम सेवनीय मानते हैं और उनका रस ले-लेकर सेवन करते हैं । ऐसे जीवों में खाने-पीने का भी विवेक नहीं होता । इसलिये उन्हें अभक्ष्य भोजन का भी ज़रा-सा भी रंज नहीं होता और वे शराब, गांजा, ड्रग्स, तम्बाकू, इत्यादि का लोगों की नज़र से बचकर सेवन करते हैं । ऐसे जीव विषयासक्त तथा अत्यन्त भोगलोलुप होते हैं ।

अधम प्रकृति का मनुष्य अपने पूरे जीवन में छिपकर यानी लोगों को पता न चले इस प्रकार पापाचरण करके अपने अनन्त भविष्य काल के

लिये दु:खमय गतियों का निर्माण कर लेता है, अनन्त पापों का बन्ध कर लेता है। ऐसे जीव इस जन्म में सच्चा सुख प्राप्त नहीं करते और भविष्य में भी उनके अनन्तकाल के लिये सच्चा सुख पाने की सम्भावना क्षीण है। ऐसे जीवों के राग-द्वेष (पसन्द-नापसन्द) अतितीव्र होते हैं, इसलिये वे जिससे द्वेष करते हैं उसके प्रति भयंकर धिक्कारभाव रखते हैं। अतएव उनका पापकर्मों का बन्ध भी अत्यन्त तीव्र होता है।

ऐसे जीवों को जगत का कोई भी धिक्कार योग्य कार्य को करने में ज़रा-सी भी हिचक नहीं होती बशर्ते किसी को मालूम न पड़े। ऐसे लोग इहलोक में अपनी प्रतिष्ठा धूमिल न हो जाय इसका पूरा ध्यान रखते हैं। चूँकि वे परलोक को नहीं मानते, उन्हें परलोक के बिगड़ने का भय नहीं होता। इसलिये परलोक में इस पाप का क्या फल होगा इसका भी विचार नहीं होता। लोग उनके बारे में क्या कहेंगे? क्या सोचेंगे? इत्यादि विकल्पों की वजह से वे बाहर से अच्छे दिखने का प्रयास अवश्य करते हैं।

ऐसे जीव वर्तमान जन्म में सिद्धि प्राप्त करने के लिये अनेक प्रकार के तप, अनुष्ठान, पापानुष्ठान भी करते हैं। वे सिद्धि - सम्पत्ति पाने के लिये कुछ भी कर सकते हैं।

इस लोक में मौज कर लो फिर परलोक किसने देखा है? ऐसे भाव अधम प्रकृति के जीवों को भी होते हैं। इसलिये वे परलोक में अपने हित के बारे में बेफ़िक्र रहते हैं। इस कारण वे हर प्रकार की अनीति कर लेते हैं। उनकी वृत्ति भी मलिन होती है। वे धर्म का भी दुरुपयोग करते हैं, कभी-कभी तो धर्म का मज़ाक़ भी उड़ाते हैं या धर्म का स्वांग रचकर सम्पत्ति

जुटाते भी देखे जाते हैं। ऐसे लोग धर्म का उपयोग इस लोक के पौद्‌गलिक सुखों की प्राप्ति के लिये करने में ज़रा भी नहीं झिझकते।

ऐसे लोग अतिक्रूर स्वभाव के होते हैं। वे बाहर से अच्छे दिखकर दूसरों को छलने में ज़रा भी नहीं हिचकते। अपने फ़ायदे के लिये दूसरों को बड़े नुक़सान में डुबोने से ज़रा-सा भी नहीं झिझकते। अपने स्वार्थ में बाधक बननेवाले लोगों को किसी भी तरीक़े से अपने रास्ते से हटाने में या हटवाने में ज़रा भी नहीं झिझकते।

ऐसे लोग सत्ता और सम्पत्ति के बल पर सभी कार्य अपनी मर्ज़ी के अनुसार करवा लेते हैं। वे सत्ता और सम्पत्ति को ही सर्वस्व मानते हैं और उन्हीं के अहंकार में रहते हैं। इसलिये वे सत्ता और सम्पत्ति के लिये अपने सगे भाई को भी मीठी बातें करके छलने से नहीं झिझकते। जिनके पास सत्ता और सम्पत्ति नहीं है ऐसे अधम प्रकृति के लोग भी यही सोचते हैं, ऐसा सोचने में ज़रा-सा भी नहीं झिझकते। ऐसे लोग दानादि में नहीं मानते हैं लेकिन किसी लौकिक लाभ हेतु, अच्छे दिखने के लिये या अपने नाम के लिये दानादि भी कर सकते हैं।

ऐसे लोगों के हृदय में सम्पत्ति के लिये भयंकर हिंसक व्यापार-उद्योग में निवेश करने में रंचमात्र भी झिझक नहीं होती। इसके विपरीत वे उससे ज़्यादा-से-ज़्यादा कैसे कमाया जा सकता है इसी व्यवस्था में लगे रहते हैं। व्यापार-उद्योग में होनेवाले पाप का अफ़सोस करने के बजाय उससे कितना कमाया जाये इस बात में उन्हें अधिक रुचि होती है। धनप्राप्ति के लिये विमध्यम, मध्यम और उत्तम प्रकृति के लोग भी कभी-कभी

लोभ-लालच में आकर ऐसे हिंसक व्यापार-उद्योग में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से साझेदार बन जाते हैं । इसलिये वे भी आंशिक रूप से अधमाधम प्रकृति में परिणमन करते हैं ।

ऐसे जीवों का स्वभाव अतिक्रूर और परिणाम अतिमलिन होने से प्राय: वे नरकायु ही बाँधते हैं और नरक से निकलकर क्रूर पशु बनकर बार-बार नरक में उत्पन्न होते हैं । इस तरह से दु:ख भोगते हुए वे अन्त में अनन्तकाल तक निगोद में रहते हैं जहाँ उन्हें अनन्तानन्त दु:ख सहने पड़ते हैं । ऐसे जीव एकेन्द्रिय में असंख्यात पुद्गलपरावर्तन तक रह सकते हैं, जहाँ दु:ख ही दु:ख हैं ।

ऐसे जीव पाप-पुण्य (कर्म) को नहीं मानते इसलिये वे इस जगत का कोई भी निन्दनीय काम करते वक़्त नहीं झिझकते । लोग क्या कहेंगे उसकी थोड़ी परवाह अवश्य होती है, इसलिये वे लोकलाज से ज़ाहिर में निन्दनीय काम नहीं करते । वे सत्ता और सम्पत्ति के लिये किसी भी निम्न स्तर तक गिर सकते हैं । वे किसी के भी साथ छल कर सकते हैं भले वह मित्र या सगा सम्बन्धी क्यों न हो । वे किसी को भी छलने में नहीं झिझकते । वे छल का आयोजन तो इतनी सफ़ाई से करते हैं कि कोई स्वप्न में भी नहीं सोच सकता । शायद छले जाने के बाद भी सामनेवाला समझ नहीं पाता कि इसने मुझे छला है ।

ऐसे लोग धनवानों को ही सर्वगुणसम्पन्न मानते हैं और उनका ही अनुसरण करते हैं । कभी-कभी लालच से प्रेरित होकर बाहर से धर्मनिष्ठ होने का ढोंग भी कर लेते हैं । धर्म का उपयोग भी लोगों को छलने के लिये

ही करते हैं। धर्ममार्ग में भी ऐसे लोग अपनी मर्ज़ी दूसरों पर थोपने के लिये किसी भी हद तक गिर सकते हैं।

हुण्डा अवसर्पिणी पंचम काल (कलियुग) में ऐसे लोगों का बड़ा ज़बरदस्त वर्चस्व दिखता है। ऐसे लोग ख़ुद को सर्वगुणसम्पन्न मानकर ही पेश आते हैं। वे सच्चे धार्मिक लोगों पर झूठे आक्षेप लगाकर या ढोंगी कहकर बदनाम भी करते हैं। ऐसे जीवों को सच्चे धार्मिक लोगों के उपदेश न तो पचते हैं न ही रुचते हैं। दिखावे के लिये वे कोई अनुकूल सम्प्रदाय द्वारा प्रचारित धर्म (सुविधाजनक धर्म) भी पाल सकते हैं।

अनेक जीवों में अधम प्रकृति आंशिक रूप से भी होती है। वे आंशिक रूप से अधमाधम और आंशिक रूप से अधम भी हो सकते हैं। जैसे कोई क्षेत्र में, काम में, वर्तन में, वाणी में, विचार में या व्यवहार में वे अधमाधम या अधम प्रकृति के भी हो सकते हैं।

ऐसे जीव किसी को दिखाने के लिये या छलने के लिये ऊपर से विमध्यम प्रकृति जैसा व्यवहार भी कर सकते हैं। ऐसे जीव लोभ, लालच, मायाचारी, क्रोध या मानवश अधमाधम प्रकृति में भी परिणमते हैं। इन्हें अधमाधम प्रकृति में परिणमते देर नहीं लगती।

नोट : इन सब अधम प्रकृति के जीवों के बारे में पढ़कर दूसरों को जाँच-परखकर (judge करके) उनको प्रमाणपत्र नहीं देना है। और ना ही उनके प्रति धिक्कार उत्पन्न होने देना है। ऐसे जीव एकमात्र करुणा के ही पात्र हैं। यदि ऐसे लक्षण स्वयं में दिखें तब तुरन्त ही मोक्ष के लक्ष्य से उन्हें दूर करने का और सत्य धर्म की प्राप्ति का पुरुषार्थ प्रारम्भ कर देना चाहिये।

३. विमध्यम प्रकृति :– विमध्यम प्रकृति वाला मनुष्य परलोक को स्वीकारता है। ऐसे जीव आत्मा को मानते हैं फिर भी वे आत्मा के सच्चे सुख से वंचित ही रहते हैं। उन्हें आत्मा के सच्चे सुख के बारे में पता तो है लेकिन उसपर उन्हें विश्वास नहीं होता। इसलिये ऐसे जीव इस लोक के पौद्गलिक सुख और परलोक के भी पौद्गलिक सुख की प्राप्ति के लिये ही पुरुषार्थ करते हैं। ऐसे जीव कोई भी पापकार्य करने से पहले परलोक के विचार से झिझकते हैं क्योंकि वे जानते है कि इस लोक में किये गये पाप-पुण्य का फल उन्हें परलोक में भुगतना ही पड़ेगा। इसलिये वे ऐसे पापकर्मों से दूर रहते हैं।

ऐसे जीव प्राय: हल्के पापानुबन्धी पाप या पापानुबन्धी पुण्य के उदयवाले होते हैं। इसलिये भले वे ग़रीब हों या अमीर हों, परलोक के विचार से कोई भी प्रकार का पाप करने से डरते हैं। ऐसे जीव सप्त महाव्यसनों (चोरी, जुआँ, मदिरापान, मांसभक्षण, शिकार, वेश्यागमन तथा परस्त्रीगमन/परपुरुषगमन) का सेवन नहीं करते। वे इन सप्त महाव्यसनों में ही जीवन का मज़ा नहीं समझते। बल्कि वे तो उन महाव्यसनों को सज़ा के रूप में देखते हैं।

इसलिये वे ऐसे सप्त महाव्यसनों से दूर ही रहते हैं।

ऐसे जीवों में खाने-पीने का विवेक नहीं होता, क्योंकि खाने-पीने का विवेक मात्र उत्तम प्रकृति से ही शुरु होता है। परन्तु उनका परलोक के पौद्गलिक सुख के विचार से अभक्ष्य भोजन का त्याग अवश्य होता है और वे शराब, गांजा, ड्रग, तम्बाकू, इत्यादि का भी सेवन नहीं करते। ऐसे

जीवों को विषयसुख पसन्द होते हैं, इसलिये भोगों का त्याग उन्हें थोड़ा कठिन लगता है। लेकिन चूँकि वे परलोक के बाहरी सुखों को चाहते हैं वे भोगों का आंशिक त्याग करते हैं।

विमध्यम प्रकृति का मनुष्य अपने पूरे जीवन में कम से कम पापाचरण करके अपने भविष्य काल के लिये अच्छी गतियों का निर्माण करता है परन्तु मिथ्यादृष्टि होने की वजह से अनुबन्ध तो पाप का ही बाँधता है। ऐसे जीव आगामी कुछ जन्मों में सांसारिक सुख प्राप्त करते हैं परन्तु भविष्य में अनन्तकाल के लिये दु:ख से नहीं बच सकते। ऐसे जीवों में राग-द्वेष (पसन्द-नापसन्द) विद्यमान होते हैं, इसलिये ऐसे जीवों में नापसन्द लोगों के लिये धिक्कारभाव भी रहता है। अतएव उनका पापकर्मों का बन्ध अधिक होता है।

ऐसे जीव जगत के कोई भी धिक्कार योग्य कार्य नहीं करते। ऐसे जीव परलोक को मानते हैं, इसलिये इस जगत का कोई भी ग़लत काम करके अपना भविष्य दु:खमय न बने इस बात का ध्यान अवश्य रखते हैं।

ऐसे जीव को आत्मा की या आत्मप्राप्ति की परवाह नहीं होती। परलोक में इस पाप का क्या फल होगा इसके विचार मात्र से वह पाप से दूर रहता है। लोग मेरे लिये क्या कहेंगे? मेरे बारे में क्या सोचेंगे? यह नहीं सोचकर इस कृत्य का फल परभव में क्या होगा? यह सोचकर वह अच्छा आचरण करने का प्रयास करता है।

ऐसे जीव वर्तमान जन्म में सिद्धि प्राप्त करने के लिये अनेक प्रकार के तप, जप, अनुष्ठान भी करते हैं। मगर पापानुष्ठान नहीं करते। वे सिद्धि,

सम्पत्ति के लिये कुछ भी करते समय पापबन्ध न हो इसका ध्यान अवश्य रखते हैं ।

मात्र इस लोक में मौज कर लो फिर परलोक किसने देखा है? ऐसे भाव विमध्यम प्रकृति के जीवों को नहीं होते । वे इहलोक और परलोक, दोनों के पौद्गलिक सुखों के विचार से प्रेरित होकर सभी कार्य करते हैं । इस कारण वे प्राय: अनीति से दूर ही रहते हैं । उनकी वृत्ति मध्यम होती है । वे धर्म का उपयोग इहलोक और परलोक के सुखों की प्राप्ति हेतु ही करते हैं । ऐसे लोग धर्मक्रियाएँ इहलोक और परलोक के लिये ही ऊपरी तौर पर करते हैं या धर्मक्रियाएँ बिना भाव के परन्तु जड़त्वयुक्त शास्त्रोक्त रीति से करते हैं । ऐसे लोग जड़त्वयुक्त दैहिक क्रियाएँ या व्रत, तप, उपवास अवश्य करते हैं । वे धर्म का उपयोग इस लोक और परलोक की लौकिक (पौद्गलिक सुखों की प्राप्ति हेतु) साधना में करते नहीं झिझकते ।

ऐसे लोग अक्रूर स्वभाव के होते है, वे दूसरों को नहीं छलते । अपने फ़ायदे के लिये दूसरों को बड़े नुक़सान में नहीं डुबोते । अपने स्वार्थ में बाधक बननेवाले लोगों को किसी भी तरीक़े से अपने रास्ते से हटाते या हटवाते नहीं, बल्कि वे उसके लिये अपने कर्मों को दोष देकर दूसरों को सहते हैं ।

ऐसे लोग सत्ता और सम्पत्ति के बल से अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ कार्य करानेवाले नहीं होते । वे सत्ता और धन को महत्व अवश्य देते हैं मगर उनको ही सर्वस्व नहीं मानते और उनका अहंकार भी नहीं करते । वे जानते हैं कि सत्ता और सम्पत्ति पूर्व पुण्य के ही फल हैं, इसलिये वे सत्ता और

सम्पत्ति पाने के लिये किसी को मीठी-मीठी बातें करके नहीं छलते। जिनके पास सत्ता और पैसा नहीं है ऐसे विमध्यम प्रकृति के लोग भी यही सोचते हैं और अपना पुण्य बढ़ाने का प्रयास करते रहते हैं। ऐसे लोग दान के फल से इस भव और परभव में अच्छी सुविधा मिले इसके लिये दानादि देते हैं।

ऐसे लोग पाप के फल से परलोक में दु:खों के विचार से, सम्पत्ति के लिये भयंकर हिंसक व्यापार-उद्योग में निवेश नहीं करते। बल्कि वे तो ऐसे व्यापार-उद्योग से दूर ही रहते हैं। विमध्यम जीवों को ऐसे भयंकर हिंसक व्यापार-उद्योग से होनेवाले पाप का डर होने से वे ऐसे भयंकर हिंसक व्यापार-उद्योग में निवेश भी नहीं करते।

ऐसे जीवों का स्वभाव अक्रूर और परिणाम शान्त होने से प्राय: देवगति का ही आयुष्य बाँधते हैं और इन्द्रिय-सुख व हीरा-माणिक-मोती-जवाहरात इत्यादि के प्रति आकर्षण होने की वजह से देवगति से निकलकर प्राय: एकेन्द्रिय में जन्म लेते हैं। एकेन्द्रिय में दु:ख भोगते-भोगते अन्त में अनन्तकाल तक निगोद में रहते हैं और अनन्तानन्त दु:ख भोगते हैं। ऐसे जीव एकेन्द्रिय में असंख्यात पुद्गलपरावर्तन तक रह सकते हैं, जहाँ दु:ख ही दु:ख हैं।

विमध्यम प्रकृति के जीव पाप-पुण्य (कर्म) में मानते हैं इसलिये वे कोई भी निन्दनीय काम करते वक़्त अवश्य ही झिझकते हैं। परलोक में अपना क्या होगा इस बात की उनको परवाह होती है इसलिये वे घोर पाप के कोई भी काम न करते हैं, न कराते हैं और न ही ऐसा पाप करनेवालों

को अच्छा मानते हैं । वे सत्ता और सम्पत्ति के लिये निम्न स्तर तक नहीं गिर सकते । वे किसी के भी साथ छल कर नहीं करते । सामनेवाला छोटा बच्चा हो या अनजान/अनपढ़ हो तो भी वे उसे नहीं छलते । उनको पाप से परलोक में मिलनेवाले दुःखों का डर होने से वे कोई भी पाप करते हुए अवश्य झिझकते हैं ।

ऐसे लोग गुणवानों को ही सर्वगुणसम्पन्न मानते हैं और उनका ही अनुकरण करते रहते हैं । वे लालच में आकर धनवानों की चापलूसी नहीं करते । बहुधा ऐसे जीव इस लोक और परलोक के पौद्‌गलिक सुखों के लालच से प्ररित होकर तथाकथित धर्मनिष्ठ बनने का पूरा प्रयास करते रहते हैं । मगर उन्हें सत्य धर्म का बोध न होने से वे तथाकथित धर्म के ठेकेदारों द्वारा छले जाते हैं । आत्मार्थी न होने से और सत्य धर्म से अनभिज्ञ होने की वजह से ऐसे जीवों का कल्याण प्राय: शक्य नहीं होता ।

हुण्डा अवसर्पिणी पंचम काल (कलियुग) में ऐसे लोग बहुत कम होते हैं । ऐसे जीवों को आगामी भव अच्छा चाहिये है परन्तु सत्य धर्म की पहचान न होने से, वे ज्ञानी जीवों को पहचान नहीं कर पाते और प्राय: वे ढोंगी जीवों द्वारा फैलाये गये तथाकथित धर्म में फँसकर मात्र पुण्यबन्ध के ही भाव करते रहते हैं । ऐसे जीवों को प्राय: सच्चे धर्म के साधकों के उपदेश न तो पचते हैं और न ही रुचते हैं । पुण्य के लिये वे कोई अनुकूल सम्प्रदाय (सुविधाजनक धर्म) का धर्म भी पाल लेते हैं ।

विमध्यम प्रकृति के जीव व्रत, जप, तप, प्रत्याख्यान, प्रतिक्रमण, पूजा इत्यादि करते तो हैं मगर वे उनमें योग्य भाव जोड़कर नहीं कर

पाते। इससे उन क्रियाओं का शुभफल बहुत कम होता है। वे ख़ुद को सच्चा धर्म साधक मानते-मनवाते हैं और लोग भी उन्हें सच्चा साधक मानते हैं फिर भी उनका आत्मकल्याण नहीं होता। क्योंकि वे सभी धर्मक्रियाएँ इहलोक और परलोक में सुख मिले, दु:ख टले इसी के लिये करते हैं। वे संसार को असार मानते ही नहीं इसलिये उनको ज़रा-सी भी मोक्षाभिलाषा नहीं होती। भले वे मुख से यह कहें कि हम मोक्षमार्ग में ही हैं और इसी से अपना मोक्ष हो जायेगा। वास्तव में उन्हें अन्तर से संसार के सुख ही प्रिय होने से उन्हें मोक्ष की ज़रूरत होती ही नहीं। बल्कि मोक्ष तो उन्हें फीका लगता है।

अनेक जीवों में विमध्यम प्रकृति आंशिक रूप से भी होती है। वे आंशिक रूप से अधम प्रकृति वाले भी हो सकते हैं। जैसे किसी क्षेत्र में, काम में, वर्तन में, वाणी में, विचार में या व्यवहार में वे अधम प्रकृति के भी हो सकते हैं। ऐसे जीव इहलोक और परलोक के दु:खों से डरकर विमध्यम प्रकृति रूप परिणमते हैं।

ऐसे जीव लोभ, लालच, मायाचारी, क्रोध या मानवश अधम प्रकृति रूप भी धारण कर सकते हैं। इन्हें अधम प्रकृति में परिणमते देर नहीं लगती। ऐसे जीव सत्य-धर्म के उपदेश के लिये पात्र भी हो सकते हैं।

नोट : इन सब विमध्यम प्रकृति के जीवों के बारे में पढ़कर दूसरों को जाँच-परखकर (judge करके) उनको प्रमाणपत्र नहीं देना है। और ना ही उनके प्रति धिक्कार उत्पन्न होने देना है। ऐसे जीव एकमात्र करुणा के ही पात्र हैं। यदि ऐसे लक्षण स्वयं में दिखें तब तुरन्त ही मोक्ष के लक्ष्य से

उन्हें दूर करने का और सत्य धर्म की प्राप्ति का पुरुषार्थ प्रारम्भ कर देना चाहिये ।

४. मध्यम प्रकृति :– मध्यम प्रकृति वाला मनुष्य मात्र परलोक के सुखों का ही चाहक होता है । ऐसे जीव आत्मा को मानते हैं परन्तु वे आत्मा के सच्चे सुख से तो वंचित होते ही हैं । उन्हें आत्मा के सच्चे सुख के बारे में पता ज़रूर है लेकिन इस बात पर उन्हें यक़ीन नहीं होता । इसलिये ऐसे जीव परलोक के पौद्गलिक सुखों की प्राप्ति हेतु इस लोक के पौद्गलिक सुखों का भी त्याग कर देते हैं । ऐसे जीव कोई भी पापकार्य नहीं करते बल्कि परलोक के बारे में सोचकर इस भव में साधुत्व ग्रहण करते हैं । वे जानते हैं कि इस लोक में किये गये पाप-पुण्य का फल उन्हें परलोक में भुगतना ही पड़ेगा । इसलिये वे ऐसे पापकर्मों से दूर रहने के लिये और परलोक के उत्तम पौद्गलिक सुखों की प्राप्ति हेतु संसार का त्याग कर जैन धर्म का या अन्य किसी भी धर्म का साधुत्व ग्रहण करते हैं ।

ऐसे जीव प्राय: हल्के पापानुबन्धी पाप या पापानुबन्धी पुण्य के उदयवाले होते हैं । बड़े साधु हों या छोटे, प्रसिद्ध हों या अनजान, वे परलोक के विचार से कोई भी पाप करने से डरते हैं । ऐसे जीव सप्त महाव्यसनों (चोरी, जुआँ, मदिरापान, मांसभक्षण, शिकार, वेश्यागमन तथा परस्त्रीगमन/परपुरुषगमन) का स्वप्न में भी सेवन नहीं करते ।

वे इन सप्त महाव्यसनों को जीवन का आनन्द नहीं समझते बल्कि वे उन्हें परलोक में सज़ा के रूप में देखते हैं । इससे वे ऐसे सप्त महाव्यसनों से दूर ही रहते हैं । ऐसे जीवों में खाने-पीने का विवेक नहीं होता, क्योंकि

खाने-पीने का विवेक मात्र उत्तम प्रकृति से ही शुरु होता है। परन्तु उन्हें परलोक के पौद्गलिक सुख के विचार से अभक्ष्य भोजन का त्याग अवश्य होता है और वे शराब, गांजा, ड्रग, तम्बाकू , इत्यादि का भी सेवन नहीं करते। ऐसे जीवों को विषयसुख पसन्द तो होते हैं परन्तु वे परलोक के विषयसुख चाहते हैं इसलिये इस लोक के विषयसुखों का सर्वथा त्याग करते हैं।

मध्यम प्रकृति का मनुष्य अपने पूरे जीवन में कम से कम पापाचरण करके अपने भविष्य काल के लिये अच्छी गतियों का निर्माण करता है मगर मिथ्यात्वी होने से अनुबन्ध पाप का ही बाँधता है। ऐसे जीव आगामी थोड़े से जन्मों में सांसारिक सुख पाते हैं पर भविष्य में अनन्तकाल के लिये दु:ख से नहीं बच सकते। ऐसे जीवों में राग-द्वेष (पसन्द-नापसन्द) मौजूद है, इसलिये उनके हृदय में अप्रिय लोगों के लिये धिक्कारभाव भी रहता है। इससे पापकर्मों का बन्ध अधिक होता है।

ऐसा जीव जगत के धिक्कार योग्य कोई भी कार्य नहीं करता। ऐसा जीव परलोक को मानता है इसलिये इस जगत के कोई भी ग़लत काम से अपना भविष्य दु:खमय न बने उसका ध्यान अवश्य रखता है। ऐसे जीव को आत्मा की या आत्मप्राप्ति की परवाह नहीं होती। परलोक में इस पाप का क्या फल होगा इसी विचार से वह पाप से दूर रहता है। लोग मेरे बारे में क्या कहेंगे? क्या सोचेंगे? ऐसा न सोचकर इस कृत्य का फल परभव में क्या होगा, यह सोचकर वह अपना आचरण अच्छा रखने का प्रयास करता है।

ऐसा जीव वर्तमान जन्म में सिद्धि प्राप्त करने के लिये अनेक प्रकार के तप, जप, अनुष्ठान नहीं करता मगर वह परलोक को सुधारने/सँवारने हेतु अर्थात् पुण्य के लोभ से अनेक प्रकार के तप, जप, अनुष्ठान कर सकता है। उसके धर्मकार्यों का लक्ष्य पुण्यसंचय रहता है, न कि मुक्ति। वह पापानुष्ठान नहीं करता। ऐसे जीवों को वर्तमान जन्म की सिद्धि से अधिक भावी जन्म के लम्बे काल तक के भोगविलास अधिक प्रिय होते हैं इसलिये वे इस जन्म में सर्वस्व का त्याग करते हैं।

इस लोक में मज़े करो क्योंकि परलोक किसने देखा है? ऐसे भाव मध्यम जीवों को नहीं होते। वे इस विचारधारा से विपरीत परलोक के पौद्गलिक सुखों के प्रति आकर्षित होकर ही सभी धर्मकार्य करते हैं। इस कारण वे सब प्रकार के अनैतिक कृत्यों से दूर ही रहते हैं। उनकी वृत्ति मध्यम होती है। वे धर्म का उपयोग सिर्फ़ परलोक के सुखों की प्राप्ति हेतु ही करते हैं। ऐसे लोग धर्मक्रियाएँ स्वर्गलोक में प्राप्त इन्द्रियजनित सुखों के लिये ही ऊपरी तौर पर करते हैं। वे धर्मक्रियाएँ बिना उचित भाव के केवल जड़त्वयुक्त शास्त्रोक्त रीति से करते हैं। ऐसे लोग जड़त्वयुक्त दैहिक क्रियाएँ या व्रत, तप, उपवास अवश्य ही करते हैं। वे धर्म का उपयोग परलोक की लौकिक (पौद्गलिक सुखों की प्राप्ति हेतु) साधना में करने में ज़रा भी नहीं झिझकते।

ऐसे लोग अक्रूर स्वभाव के होते हैं, वे दूसरों को नहीं छलते। अपने फ़ायदे के लिये दूसरों को बड़े नुक़सान में नहीं डुबोते। अपने स्वार्थ में बाधक लोगों को किसी भी तरीक़े से अपने रास्ते से न हटाते हैं न ही

हटवाते हैं। बल्कि वे तो रुकावटों के लिये अपने पूर्वकृत कर्मों को दोष देकर दूसरों को सहते हैं और उत्तम चारित्र पालते हैं।

ऐसे लोग सत्ता और सम्पत्ति के बल पर अपनी मर्ज़ी के अनुसार कार्य करानेवाले नहीं होते। वे सत्ता और सम्पत्ति को महत्व नहीं देते और न ही उन्हें सर्वस्व मानते हैं। उनको इस लोक की किसी भी वस्तु का अहंकार नहीं होता, क्योंकि वे धर्म और चारित्र का पालन परलोक की दिव्यता की प्राप्ति के लिये ही करते हैं। वे जानते हैं कि सत्ता और सम्पत्ति पूर्वकृत पुण्य के ही फल हैं, इसलिये वे सत्ता और सम्पत्ति के लिये किसी को भी मीठी-मीठी बातें बोलकर नहीं छलते। मध्यम प्रकृति के लोग सत्ता और सम्पत्ति से दूर ही रहते हैं। वे अच्छे से अच्छा चारित्र पालन करके पुण्य बढ़ाने का प्रयास ही करते रहते हैं। ऐसे लोग दूसरों को दानादि देने का उपदेश देते हैं और उसकी अनुमोदना के फल से इस भव और परभव में अच्छी सुविधा मिलती है यह समझाते हैं।

ऐसे जीव परलोक के विचार से पाप से बचने के लिये धनप्राप्ति हेतु भक्तों की ख़ुशामद नहीं करते। भक्तों को व्यापारसम्बन्धी सलाह नहीं देते। वे ख़ुद मन्त्र-तन्त्र आदि की साधना नहीं करते और भक्तों को भी ऐसा करने की सलाह नहीं देते। वे तो व्यापार, सम्पत्ति या सत्ता की बातों से दूर ही रहते हैं। मध्यम प्रकृति के जीवों को वैसे कामों में बन्धनेवाले पापों का डर होने से वे ऐसी कोई भी बात में रस नहीं लेते।

ऐसे जीवों का स्वभाव अक्रूर और परिणाम शान्त होने से वे प्राय: देवगति का ही आयुष्य बाँधते हैं और इन्द्रियसुख प्राप्त करते हैं। चूँकि वे

हीरा-माणिक-मोती-जवाहरात इत्यादि के प्रति आकर्षित होते हैं, वे देवगति से निकलकर प्राय: एकेन्द्रिय में जाते हैं। एकेन्द्रिय में दु:ख भोगते-भोगते अन्त में अनन्तकाल तक निगोद में रहते हैं और अनन्तानन्त दु:ख भोगते हैं। ऐसे जीव एकेन्द्रिय गति में असंख्यात पुद्गलपरावर्तन तक रह सकते हैं जहाँ दु:ख ही दु:ख हैं।

मध्यम प्रकृति के जीव पाप-पुण्य (कर्म) में मानते हैं। वे इस जगत का कोई भी निन्दनीय काम नहीं करते। परलोक में अपना क्या होगा इस बात की उनको परवाह रहती है इसलिये वे पाप के कोई काम न करते हैं न कराते हैं और न ही करनेवाले को अच्छा मानते हैं। उन्होंने इस भव का सत्ता और सम्पत्ति के प्रति अपना मोह परलोक के दिव्य सुख के प्रति मोह के कारण गौण कर दिया है। वे पाप के डर से किसी के भी साथ छल नहीं करते। छोटा बच्चा हो या अनजान/अनपढ़ हो, वे किसी को भी नहीं छलते। उनको पाप की वजह से परलोक में मिलनेवाले दु:खों का डर होता है इसलिये वे कोई भी पाप नहीं करते।

ऐसे लोग गुणवानों को ही सर्वगुणसम्पन्न मानते हैं और उन्हीं का अनुसरण करते रहते हैं। वे लालच में आकर धनवानों की चापलूसी नहीं करते। ऐसे जीव परलोक के पौद्‌गलिक सुखों के लालच से प्ररित होकर चारित्र पालने का पूरा प्रयास करते रहते हैं। मगर उन्हें सत्य धर्म का बोध न होने से, वे तथाकथित धर्म से छले जाते हैं। आत्मार्थी न होने से और सत्य धर्म से अनभिज्ञ होने की वजह से ऐसे जीवों का कल्याण प्राय: शक्य

नहीं होता । हुण्डा अवसर्पिणी पंचम काल (कलियुग) में ऐसे लोग बहुत कम होते हैं ।

ऐसे जीवों के मन में आगामी भव अच्छा होना चाहिये यह भाव होने से और सत्य धर्म की पहचान न होने से, वे ज्ञानी जीवों को पहचान नहीं पाते और प्राय: ढोंगी जीवों के द्वारा फैलाये गये तथाकथित धर्म में फँसकर मात्र पुण्यबन्ध के ही भाव करते रहते हैं । ऐसे जीवों को प्राय: सच्चे धार्मिक जीवों का उपदेश न पचता है न रुचता है । पुण्य के लिये वे कोई अनुकूल सम्प्रदाय (सुविधाजनक धर्म) का धर्म भी कर सकते हैं और बहुत सारे कष्टों को सहन करते हैं, क्योंकि उनको परलोक के सुख में ज़रा-सी भी कमी न रह जाय इस बात की चिन्ता अधिक रहती है ।

मध्यम प्रकृति के जीव व्रत, जप, तप, प्रत्याख्यान, प्रतिक्रमण, भावपूजा इत्यादि करते हैं मगर वे उनमें योग्य भाव जोड़कर नहीं कर सकते; इससे उन क्रियाओं का शुभफल बहुत कम होता है । वे ख़ुद को साधु मानते-मनवाते हैं और लोग भी उनको साधु मानते हैं फिर भी उनका आत्मकल्याण नहीं होता क्योंकि वे सभी धर्मक्रियाएँ परलोक में सुखप्राप्ति और दुःखनिवृत्ति के लिये ही करते हैं । वे संसार को असार मानते ही नहीं, इसलिये उनमें ज़रा-सी भी मोक्षाभिलाषा नहीं होती । भले वे अपने मुख से यह कहें की वे मोक्षमार्ग में ही हैं और उनके द्वारा अपनाये गये मार्ग का अनुसरण करके मोक्ष हो जायेगा, वास्तव में उन्हें अन्तर से संसार के सुख ही प्रिय होते हैं इसलिये उन्हें मोक्ष की ज़रूरत ही नहीं होती । उन्हें तो मोक्ष फीका लगता है ।

समझ के अभाव की वजह से अनेक जीवों में मध्यम प्रकृति आंशिक रूप से ही होती है। ऐसे जीव बाह्य में साधु होते हैं मगर विचारों से वे आंशिक रूप से विमध्यम या अधम प्रकृति के भी हो सकते हैं। किसी क्षेत्र में, काम में, वर्तन में, वाणी में, विचार में या व्यवहार में वे विमध्यम या अधम प्रकृति के भी हो सकते हैं। ऐसे जीव परलोक के दु:खों से डरकर ही मध्यम प्रकृति रूप परिणमते हैं।

कभी-कभी ऐसे जीवों को लोभ, लालच, मायावश या क्रोध, मानवश अधम प्रकृति रूप से परिणमते देर नहीं लगती। ऐसे जीव सत्यधर्म के उपदेश के लिये सुपात्र भी हो सकते हैं।

नोट : इन सब मध्यम प्रकृति के जीवों के बारे में पढ़कर दूसरों को जाँच-परखकर (judge करके) उनको प्रमाणपत्र नहीं देना है। और ना ही उनके प्रति धिक्कार उत्पन्न होने देना है। ऐसे जीव एकमात्र करुणा के ही पात्र हैं। यदि ऐसे लक्षण स्वयं में दिखें तब तुरन्त ही मोक्ष के लक्ष्य से उन्हें दूर करने का और सत्य धर्म की प्राप्ति का पुरुषार्थ प्रारम्भ कर देना चाहिये।

५. उत्तम प्रकृति :– उत्तम प्रकृति वाला मनुष्य आत्मिक सुखों को चाहता है। ऐसे जीव आत्मा को मानते हैं और सच्चा सुख आत्मा में ही है इस बात पर उन्हें पूर्ण विश्वास होता है। ऐसे जीवों को आत्मा और मोक्ष में अत्यन्त रुचि होती है। ऐसे जीव निश्चय सम्यग्दर्शन के बहुत नज़दीक पहुँचे हुए या निश्चय सम्यग्दृष्टि (आत्मज्ञानी) होते हैं। ऐसे उत्तम प्रकृति के जीव पौद्गलिक सुखों को त्यागे हुए या पौद्गलिक सुखों को भोगते हुए

भी दिखते हैं। मगर उनको अभिप्राय में पौद्गलिक सुख भोगने योग्य नहीं लगते, अभिप्राय में उन्हें एकमात्र मोक्ष ही प्राप्त करने योग्य लगता है। इसलिये ऐसे जीव पौद्गलिक सुखों की प्राप्ति हेतु धर्म नहीं करते परन्तु आत्मप्राप्ति या आत्मस्थिरता के लिये ही धर्म करते हैं। वे पापभीरु होते हैं इसलिये जहाँ तक बन सके वे पापों से बचने के लिये प्रयत्नशील रहते हैं। वे जानते हैं कि इस लोक में किये गये पापों का फल उन्हें ही परलोक में भुगतना पड़ेगा। इसलिये वे ऐसे पापकर्मों से दूर रहने हेतु और आत्मिक सुख की प्राप्ति हेतु संसार में रहकर या संसार का त्याग करके सत्य धर्म के अनुसार जीवन जीते हैं।

ऐसे जीव प्राय: पुण्यानुबन्धी पाप या पुण्यानुबन्धी पुण्य के उदयवाले होते हैं। इससे उनके वर्तमान जीवन में पाप का उदय हो सकता है। ऐसे जीव सप्त महाव्यसनों (चोरी, जुआँ, मदिरापान, मांसभक्षण, शिकार, वेश्यागमन तथा परस्त्रीगमन/परपुरुषगमन) का स्वप्न में भी सेवन नहीं करते। वे इन सप्त महाव्यसों को जीवन का मज़ा नहीं समझते बल्कि वे तो उन्हें अनन्तकाल की सज़ा (संसार) के रूप में देखते हैं। इससे वे ऐसे सप्त महाव्यसनों से दूर ही रहते हैं। ऐसे जीवों में खाने-पीने का विवेक होता है, इससे उन्हें अभक्ष्य भोजन का त्याग अवश्य होता है और वे शराब, गांजा, ड्रग, तम्बाकू, इत्यादि का उपयोग कभी नहीं करते। ऐसे जीव उदय के कारण भोग भोग भी सकते हैं मगर उनको भोगों में सुखबुद्धि का भाव नहीं होता।

उत्तम प्रकृति का मानव अपने पूरे जीवन में कम से कम पापाचरण करता है और अपनी आत्मस्थिरता की वजह से या तो मोक्ष प्राप्त कर लेता है या फिर भविष्यकाल में बहुत अच्छे भव प्राप्त करता है। जो जीव सम्यग्दृष्टि होते हैं उन्हें पुण्य का ही अनुबन्ध होता है। ऐसे जीव अगर सम्यग्दर्शन न गँवाएँ तो प्राय: भविष्य के कुछ ही जन्मों में स्वर्ग के सुख या स्वर्ग जैसे सुख पाकर अवश्य ही मोक्ष पाते हैं। इस तरह वे दु:ख से बचकर आगामी अनन्तकाल के लिये अनन्त-अव्याबाध सुख की प्राप्ति कर लेते हैं। प्राय: ऐसे जीवों के राग-द्वेष (पसन्द-नापसन्द) मन्द होते हैं। ऐसे जीवों के मन में अप्रिय लोगों के लिये धिक्कारभाव प्राय: बहुत मन्द होता है, इससे पापकर्मों का बन्ध भी प्राय: मन्द ही होता है। आत्मा के उच्च स्तर पर पहुँचने के बाद उनको धिक्कारभाव की जगह करुणाभाव ही होता है। इससे उनको पापकर्मों के बन्ध के बजाय उन पुराने पापकर्मों की निर्जरा होती है जिनसे अप्रिय संयोग प्राप्त हुए हों और साथ में पुण्यकर्म का बन्ध भी होता है।

ऐसे जीव जगत के धिक्कार योग्य कोई भी कार्य नहीं करते। ऐसे जीव परलोक को मानते हैं, इसलिये इस जगत के कोई भी ग़लत काम से अपना भविष्य दु:खमय न बने उसका ध्यान हमेशा रखते हैं क्योंकि उनका एकमात्र लक्ष्य आत्मप्राप्ति और आत्मस्थिरता ही होती है। ऐसे जीवों के अभिप्राय में प्राय: पाप करने के भाव होते ही नहीं इसलिये वे पाप से दूर रहते हैं। लोग क्या कहेंगे? मेरे बारे में क्या सोचेंगे? यह न सोचकर, इस कृत्य का फल परभव में क्या होगा? ऐसे कृत्य की वजह से हमें अनन्तकाल

के लिये संसार में भटकना पड़ेगा ऐसा सोचकर वे सभी के प्रति मैत्री, प्रमोद, करुणा और मध्यस्थभाव के साथ रहने का प्रयास करते हैं।

ऐसे जीवों को सिद्धि और सम्पत्ति का मोह नहीं होता। वे सिद्धि और सम्पत्ति प्राप्त करने के लिये किये जाने वाले तप, जप, अनुष्ठान को मोक्षमार्ग में विघ्न मानते हैं। ऐसे जीवों को अगर सहज में कोई सिद्धि प्राप्त हुई हो तो भी आवश्यक न होने पर वे उसका उपयोग टालते हैं। वे पुण्योदय से प्राप्त सम्पत्ति का भी सदुपयोग करते रहते हैं तथा पापानुष्ठान नहीं करते।

इस लोक में मौज कर लो फिर परलोक किसने देखा है? ऐसे भाव उत्तम प्रकृति के जीवों को स्वप्न में भी नहीं आते। इसके विपरीत वे मोक्षप्राप्ति के विचारों से प्रेरित होकर सभी जीवों को स्व-आत्मवत समझकर सारे कार्य करते हैं। इसलिये वे सभी प्रकार के अनैतिक कृत्यों से दूर ही रहते हैं। उनकी वृत्ति उत्तम होती है और वे धर्म का उपयोग सिर्फ़ आत्मिक सुखों की प्राप्ति हेतु ही करते हैं। ऐसे लोग धर्मक्रियाएँ केवल आत्मप्राप्ति या आत्मस्थिरता के लिये ही भावसहित करते हैं। ऐसे लोग दैहिक क्रियाएँ या जड़त्वयुक्त व्रत-तप-उपवास देखादेखी में या दिखावे के लिये कभी नहीं करते। वे धर्म का उपयोग मोक्ष की साधना के लिये ही करते हैं।

ऐसे लोग अक्रूर स्वभाव के होते हैं, वे दूसरों को नहीं छलते। अपने फ़ायदे के लिये दूसरों को बड़े नुक़सान में नहीं डालते। वे अपने स्वार्थ में बाधक बननेवाले लोगों को किसी भी तरीक़े से अपने रास्ते से न हटाते हैं और न ही हटवाते हैं। बल्कि वे इस प्रकार की बाधा के लिये सिर्फ़ अपने

कर्मों को दोष देकर दूसरों को सहते हैं और उन्हें अपना पाप छुड़ानेवाला जानकर मन में उनको उपकारी मानते हैं। इसलिये वे विपरीत परिस्थितियों में भी सुखी रह सकते हैं। ऐसे जीव ये पाप मैं भविष्य में कभी नहीं करूँगा ऐसा दृढ निश्चय करते हैं और भूतकाल के पापों की माफ़ी भी माँगते हैं।

ऐसे लोग सत्ता और सम्पत्ति के बल पर अपनी मर्ज़ी के अनुसार कार्य करानेवाले नहीं होते। वे सम्पत्ति को मात्र जीवन की ज़रूरत मानते हैं और सत्ता का उपयोग अत्यन्त सावधानीपूर्वक करते हैं। वे सत्ता और सम्पत्ति का दुरुपयोग नहीं करते, न ही अपनी सत्ता का अहंकार रखते हैं। वे जानते हैं कि सत्ता और सम्पत्ति पूर्वकृत पुण्य के ही फल हैं, इसलिये वे सत्ता और सम्पत्ति के लिये किसी को मीठी बातें करके नहीं छलते। उत्तम प्रकृति के विरतियुक्त (साधु) लोग सत्ता और सम्पत्ति से दूर ही रहते हैं। वे अच्छे से अच्छा चारित्र पालन करके आत्मस्थिरता बढ़ाने का प्रयास ही करते हैं।

उत्तम प्रकृति के लोगों का सम्पत्ति के प्रति मोह अल्प होता है इसलिये वे दानादि करते हैं। वे लोगों के दु:ख-दर्द कम करने के लिये और धन का सदुपयोग करने के लिये भी दान देते हैं और इसके लिये लोगों को प्रोत्साहित भी करते हैं। दान करने से लोगों के हृदय में धन का मोह कम होता है। इसलिये उत्तम प्रकृत्ति के लोग दान की अनुमोदना करते हैं।

ऐसे जीव संसार के दु:खों के विचार से और अपना संसार बढ़ न जाय इस विचार से सम्पत्ति प्राप्ति के लिये भक्तों की ख़ुशामद नहीं करते। भक्तों को व्यापारसम्बन्धी सलाह नहीं देते। ख़ुद मन्त्र-तन्त्र आदि की साधना नहीं करते और भक्तों को भी वैसा करने का सुझाव नहीं देते। इसके

विपरीत वे व्यापार, सम्पत्ति या सत्ता की बातों से दूर ही रहते हैं। उत्तम प्रकृति के जीवों की आत्मस्थिरता में ही रुचि होने से प्राय: वे अन्य किसी भी बात में रुचि नहीं लेते ।

ऐसे जीव क्रूर नहीं होते। वे शान्तपरिणामी होते हैं इसलिये वे प्राय: देवगति का ही आयुष्य बाँधते हैं। इन्द्रिय-सुख व हीरा-मोती-माणिक-जवाहरात इत्यादि को भोगते हुए भी उनके प्रति आकर्षित न होने से देवगति से निकलकर फिर मनुष्यगति में आकर प्राय: मोक्षमार्ग में ही प्रगति करते हैं। ऐसे जीवों का सम्यग्दर्शन छूट भी जाय तो वे अर्धपुद्गलपरावर्तनकाल में अवश्य मोक्ष प्राप्त करते ही हैं ।

उत्तम प्रकृति के जीव पाप-पुण्य (कर्म) में मानते हैं इसलिये वे इस जगत का कोई भी निन्दनीय काम नहीं करते। उनमें से ज़्यादातर जीव सम्यग्दृष्टि होने से वे प्राय: घोर पाप के कोई काम न तो करते हैं, न करवाते हैं और न ही करनेवाले को अच्छा मानते हैं। ऐसे जीव सत्ता और सम्पत्ति पाने के लिये निम्न स्तर तक नहीं गिरते। वे किसी के भी साथ छल नहीं करते । छोटा बच्चा हो या अनजान/अनपढ़ हो, वे किसी को नहीं छलते। उनको पाप करने पर परलोक में मिलनेवाले दु:खों की और अनन्त परावर्तनों की जानकारी होने से वे कोई भी पाप करते वक़्त अवश्य झिझकते हैं ।

ऐसे लोग गुणवानों को ही सर्वगुणसम्पन्न मानते हैं और उन्हीं का अनुसरण करते हैं । वे लालच में आकर धनवानों की चापलूसी नहीं करते। ऐसे जीव परलोक के पौद्‌गलिक सुखों के लालच से प्रेरित होकर

देशविरत या सर्वविरत चारित्र नहीं पालते । वे आत्मस्थिरता हेतु, पाप से बचने हेतु और स्वदया-परदया हेतु ही यथासम्भव चारित्र का पालन करते हैं । चूँकि वे आत्मार्थी होते हैं और सत्यधर्म प्राप्त कर लेते हैं, ऐसे जीवों का कल्याण अवश्य ही होता है । अगर ऐसे जीव सर्वविरति स्वीकारते हैं तो वे उसे पूर्ण शुद्धता से पालने का प्रयास करते हैं । वे किसी भी प्रकार के सांसारिक कार्यक्रम आयोजित नहीं करते । वे मात्र कर्मों के उदय के अनुसार बिना किसी भी नियत कार्यक्रम के यथासम्भव शुद्ध चारित्र पालते हुए विचरते हैं । जो उत्तम प्रकृति के जीव सर्वविरति पालने में असमर्थ होते हैं वे श्रावकधर्म पालते हैं । प्राय: वे आधे-अधूरे साधु बनकर अपनी गिनती साधुओं में नहीं कराते ।

हुण्डा अवसर्पिणी पंचम काल (कलियुग) में ऐसे उत्तम प्रकृति के लोग बहुत ही कम होते हैं । ऐसे जीवों में सिर्फ़ और सिर्फ़ संसारमुक्ति की भावना ही होती है । ऐसे जीवों को सत्यधर्म की पहचान होती है इसलिये वे ज्ञानी जीवों को उनके अभिप्राय और उपदेश से पहचान लेते हैं । इसलिये वे ढोंगी जीवों के द्वारा फैलाये हुए तथाकथित धर्म में न फँसकर अपना अनन्त संसार बढ़ाने से बच जाते हैं और अन्य जीवों को भी तथाकथित धर्म से बचाकर सत्यधर्म की पहचान कराने की कोशिश करते रहते हैं । ऐसे जीवों को सत्यधर्म के उपदेश में अत्यन्त रुचि होती है । वे संसार-मुक्ति हेतु ही सत्यधर्म का आचरण करते हैं और उसके लिये अनेक कष्ट भी सहन करते हैं ।

उत्तम प्रकृति के जीव व्रत, जप, तप, प्रत्याख्यान, प्रतिक्रमण, भावपूजा

इत्यादि सभी करते हैं। वे इन सभी क्रियाओं में योग्य भाव भी जोड़ सकते हैं, इससे उनको इन क्रियाओं का बहुत अच्छा फल मिलता है। वे सभी धर्मक्रियाएँ मोक्ष-सुख मिले और संसार के दु:ख टलें इसी के लिये करते हैं। वे संसार को असार ही मानते हैं। ऐसे जीवों से अनेक लोगों को मोक्षमार्ग की प्राप्ति होती है और वे भी कालक्रम से मोक्ष को ही पाते हैं।

अनेक सम्यग्दर्शन-सन्मुख जीवों में उत्तम प्रकृति आंशिक रूप से ही होती है। आंशिक रूप से विमध्यम प्रकृति भी हो सकती है। जैसे किसी क्षेत्र में, कार्य में, वर्तन में, वाणी में, विचार में या व्यवहार में वे विमध्यम प्रकृति वाले भी हो सकते हैं। ऐसे जीव अनन्त संसार के डर से और मोक्षाभिलाषा से ही उत्तम प्रकृति में परिणमन करते हैं। कभी-कभी ऐसे जीवों को क्रोध, मान, माया या लोभ की वजह से विमध्यम, मध्यम या अधम प्रकृति रूप में परिणमते देर नहीं लगती।

प्रश्न – उत्तम प्रकृति के धारक जीव बनने के लिये क्या करना चाहिये?

उत्तर – उत्तम प्रकृति के धारक जीव बनने के लिये सभी को सत्यधर्म की पहचान करनी चाहिये, सम्यग्दर्शन के लिये योग्यता बनानी चाहिये। ख़ुद को क्या पसन्द है, इसकी जाँच करने से पता चलेगा कि ख़ुद को संसार पसन्द है या मोक्ष। जिसे संसार पसन्द है उसे उत्तम प्रकृति प्राप्त होने की सम्भावना क्षीण है। सम्यग्दर्शन हेतु जीव को अपनी रुचि/पसन्द को जाँचना चाहिये। क्योंकि लोगों की सहज प्रवृत्ति रुचि अनुसार होती

है। जिसे एकमात्र सत्यधर्म ही पसन्द है और उसी को प्राप्त करने की प्रवृत्ति में रुचि है ऐसा जीव उत्तम प्रकृतिधारक जीव होता है।

सत्यधर्म की प्राप्ति में विघ्न आ सकते हैं। मोहग्रसित जीव कहेंगे कि आप ग़लत रास्ते पर हैं पर जिसकी लगन पक्की होती है उसके लिये विघ्न पर जय भी आसान होती है। ऐसे जीव अपने अभिप्राय में जितना बदलाव ला सकते हैं, उससे हुए अपने लाभ के अनुरूप आसपास के दूसरें जीवों को भी सत्यधर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते रहते हैं। ऐसे जीवों में प्रभावना का भाव सहज ही होता है। उनका आचरण परिपूर्ण ही हो यह ज़रूरी नहीं पर उनकी मान्यता अवश्य परिपूर्ण होती है।

हमने सम्यग्दर्शन के लिये योग्यता का वर्णन अपनी किताब 'सुखी होने की चाबी' में किया है। उसी का विस्तृत वर्णन अपनी दूसरी किताब 'सम्यग्दर्शन की विधि' में किया है। इसके अतिरिक्त सभी को 'यूनिवर्सल लॉ' रोज़ पढ़कर उसपर चिन्तन करना चाहिये। यह सामग्री हमारी वेबसाईट पर उपलब्ध है।

Website: www.jayeshsheth.com

जिन्हें ये पुस्तकें चाहिये वे शैलेशभाई शाह या मनीषभाई मोदी को फ़ोन या Whatsapp के द्वारा सम्पर्क करके नि:शुल्क मँगवा सकते हैं। उनके मोबाईल नम्बर इस प्रकार हैं -

शैलेश शाह :- +91 98924 36799 / 93243 37326

मनीष मोदी :- +91 98208 96128

जिज्ञासु जीवों को ऊपर लिखित दोनों पुस्तकों का शान्ति से गहन अभ्यास, चिन्तन, मनन करना चाहिये। उन्हें बार-बार पढ़ना चाहिये। उनमें हमने बताये है कि जो जीव राग-द्वेष में परिणमन करने के बावजूद अगर राग-द्वेष से भिन्न अपने शुद्धात्म स्वरूप का अनुभव कर सकता है, वह सम्यग्दृष्टि है। यही सम्यग्दर्शन की विधि है। यह बात करने की नहीं बल्कि समझने की है क्योंकि इसे मानसिक प्रयास से नहीं किया जाता बल्कि योग्यता बनाने से सहज ही प्राप्य है। हमने अपनी पुस्तकों में यही प्रक्रिया बतायी है। यहाँ समझना यह है कि जो भेदज्ञान कर सकता है वही ज्ञानी बन सकता है। यह बात शुद्ध द्रव्यार्थिकनय से कही गयी है और उसी प्रकार अनुभव में आती है।

अनेक लोगों को यह प्रश्न होता है कि अभी तो हम अशुद्ध हैं तो शुद्धात्मा का अनुभव कैसे कर सकते हैं? उन्हें हम कहते हैं कि यह बात नय की है, इसलिये जिसे नय का यथार्थ ज्ञान होता है वही इस बात को समझ पायेगा। अथवा वह समझ पायेगा जिसे नयों का ज्ञान तो नहीं पर समीचीन योग्यता प्राप्त की है। उसे तो अपने आप ही, बिना नय के अभ्यास के भी आत्मा का अनुभव होता है और अपूर्व आनन्द भी प्राप्त होता है।

उपरोक्त सम्यग्दर्शन औपशमिक या क्षायोपशमिक भी हो सकता है। इससे शुद्धात्मा के अनुभव की स्पष्टता में अवश्य भिन्नता हो सकती है, पर अनुभवजनित आनन्द में अधिक भिन्नता नहीं होती।

परिणाम पलटते ही किसी जीव की उत्तम प्रकृति पलटकर मध्यम,

विमध्यम या अधम प्रकृति भी हो सकती है। कभी-कभी ऐसे जीवों को क्रोध, मान, माया या लोभ की वजह से विमध्यम, मध्यम या अधम प्रकृति रूप में परिणमते देर नहीं लगती।

नोट : इन सब उत्तम जीवों के बारे में पढ़कर अपने को जाँच - परखकर मोक्षमार्ग में आगे बढ़ने का पुरुषार्थ करना चाहिये। ऐसे लक्षण अगर हममें विद्यमान न हों तब तुरन्त ही हमें मोक्ष के लक्ष्य से उन लक्षणों को प्राप्त करने का पुरुषार्थ प्रारम्भ करना चाहिये।

६. उत्तमोत्तम प्रकृति :– उत्तमोत्तम प्रकृति के धारक जीव केवली भगवान या तीर्थंकर भगवान होते हैं। वे कृतकृत्य होते हैं। वे वर्तमान जीवन का आयुष्य पूर्ण होते ही सिद्ध भगवान बननेवाले हैं। उत्तमोत्तम प्रकृति धारक जीव के बारे में अन्य मत ऐसा भी है कि इस श्रेणी में सिर्फ़ मात्र तीर्थंकर प्रकृति के धारक जीवों का ही समावेश होता है क्योंकि वे धर्म की स्थापना करते हैं, जिससे उनके सिद्ध हो जाने के बाद भी अनेकों जीव सिद्ध हो सकते हैं। पर हमारे मत से सभी केवलज्ञानी जीव उत्तमोत्तम प्रकृति के धारक जीवों में गिनती पाते हैं, क्योंकि वे इस लोक का उत्तमोत्तम/सर्वश्रेष्ठ सिद्धपद पानेवाले ही हैं। इसलिये वे उत्तमोत्तम प्रकृतिधारक जीव हैं। हमारे मतानुसार उनसे कोई जीव मोक्षमार्ग पाते हैं या नहीं इस मापदण्ड से उनकी प्रकृति के बारे में निर्णय नहीं लिया जा सकता। इसलिये सभी केवलज्ञानी जीव उत्तमोत्तम प्रकृति के धारक जीव ही हैं।

उत्तमोत्तम प्रकृति के धारक जीव हमारे लिये पूज्य, स्तुत्य, श्रद्धास्थान, सत्यधर्म के उत्कृष्ट फलरूप और लक्ष्यरूप हैं। वे आत्मा के अव्याबाध

आनन्द में मग्न रहते हैं। वे ही हमें मोक्षमार्ग का उपदेश देनेवाले हैं। इसलिये वे हमारे लिये अनन्त उपकारी हैं।

हम लोग उनकी पूजा अवश्य करते हैं पर उनके बताये मार्ग पर चलने में असमर्थ हैं इसलिये हम अब तक संसार में भटक रहे हैं। वास्तव में उनके बताये रास्ते पर चलना ही उनकी यथार्थ पूजा है, इसलिये हमें अभी यह तय करना चाहिये कि अब हम अहर्निश उनके दिखाये मार्ग पर चलने का पुरुषार्थ करेंगे। यदि हम उनके बताये मार्ग पर चलेंगे तब अवश्य ही हम भी केवलज्ञान प्राप्त करके सिद्ध बनेंगे। इसलिये हमारी यही शुभेच्छा है कि हम सभी सत्यधर्म के मार्ग पर चलकर त्वरा से सिद्ध बनें।

अस्तु।

नोंधपोथी

नोंधपोथी

प्रश्न—धर्म यानि क्या ?

उत्तर—धर्म का सामान्य अर्थ सम्प्रदाय अनुसार करने/समझने में आता है, परन्तु धर्म का सच्चा अर्थ वस्तु का स्वभाव (गुण धर्म) वह धर्म है।

प्रश्न—आत्मा का स्वभाव (गुण धर्म) क्या है ?

उत्तर—आत्मा का स्वभाव (गुण धर्म अर्थात् लक्षण) जानना-देखना है।

प्रश्न—आत्मा की पहिचान क्या ? उसका अनुभव कैसे हो सकता है ?

उत्तर—सर्व जनों को अपने भाव, ज्ञान, जगत इत्यादि जानने में आता ही है, किन्तु वे अपने को आत्मा नहीं मानकर, शरीर मानते हैं। यह मिथ्यात्व है। अगर हम अपने को शरीर मानें, तब आँख अच्छी होने पर भी मृत्यु के बाद उस आँख से दिखता नहीं, परन्तु वही आँखें अगर किसी प्रज्ञाचक्षु के शरीर में प्रत्यारोपण की जाए तो वह देख सकता है। इससे निश्चय किया जा सकता है कि जानने-देखनेवाला आत्मा मृत शरीर में से चला गया है, जबकि वैसा ही जानने-देखनेवाला आत्मा उस प्रज्ञाचक्षु के शरीर में मौजूद है, जिससे वह देख सकता है। इसी तरह जानने-देखनेवाले आत्मा की पहिचान करके आँखों से ज्ञेयों को देखता है वह ज्ञायक जानने-देखनेवाला आत्मा, वह मैं स्वयं हूँ, नहीं कि आँखें और वह मैं हूँ, सोऽहम्, वह ज्ञानमात्र स्वरूप ही मैं हूँ, ऐसा निश्चित करना अर्थात् मैं मात्र जानने-देखनेवाला ज्ञायक-ज्ञानमात्र शुद्धात्मा हूँ-ऐसी भावना भाना और वैसा ही अनुभवना। वही अनुभव/सम्यग्दर्शन की विधि है।

प्रश्न—सम्यग्दर्शन के लिए क्या योग्यता आवश्यक है ?

उत्तर—सामान्यरूप से सज्जनता, सरलता, अन्याय-अनीति का त्याग, अभक्ष्य (माँस, मछली, मक्खन, शहद, कन्दमूल, रात्रिभोजन, अचार, पापड़, इत्यादि) का त्याग, सप्त महाव्यसन (जुआ, शराब, माँस, वेश्यागमन, चोरी, शिकार और परस्त्रीगमन अथवा परपुरुषगमन) का त्याग, भवभ्रमण का डर, संसार असार लगना, भव, रोग-समान लगना, स्व आत्मा के कल्याण की तीव्र इच्छा, बारह भावना का चिन्तवन, सर्व जीवों को मैत्री आदि चार भावना से ही देखना-समझना, तत्त्व का निर्णय करना और देव-गुरु-धर्म/शास्त्र का परम आदर आवश्यक है।

मैत्री भावना – सर्व जीवों के प्रति मैत्री चिन्तवन करना, मेरा कोई दुश्मन ही नहीं ऐसा चिन्तवन करना, सर्व जीवों का हित चाहना।

प्रमोद भावना – उपकारी तथा गुणी जीवों के प्रति, गुण के प्रति, वीतरागधर्म के प्रति प्रमोदभाव लाना।

करुणा भावना – अधर्मी जीवों के प्रति, विपरीत धर्मी जीवों के प्रति, अनार्य जीवों के प्रति करुणाभाव रखना।

मध्यस्थ भावना – विरोधियों के प्रति मध्यस्थभाव रखना।

– मुखपृष्ठ की समझ –

अपने जीवन में सम्यग्दर्शन का सूर्योदय हो और उसके फलरूप अव्याबाध सुखस्वरूप सिद्ध–अवस्था की प्राप्ति हो–यही भावना।